यज्ञः के लिए प्रचुर धन चाहिए; अतः यह भी गृहस्थों का दायित्व है। ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी—इन सब अन्य आश्रमों के निष्किंचन पुरुष भिक्षावृत्ति से जीवन-यापन करते हैं। इसलिए नाना प्रकार के यज्ञ करना गृहस्थों का कर्तव्य है। वैदिक शास्त्रों में अग्निहोत्र आदि का विधान है, परन्तु इनके लिए इतना धन चाहिए है कि आजकल प्रायः कोई भी गृहस्थ यह सब नहीं कर सकता। इस युग के लिए **हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे** — इस महामन्त्र का संकीर्तन-यज्ञ ही सर्वश्रेष्ठ है। यह सब से उत्तम और सरल यज्ञ है। इसे अंगीकार करके प्राणीमात्र लाभान्वित हो सकता है। अस्तु, गृहस्थ को दान, संयम और यज्ञ करना चाहिए।

स्वाध्यायः, **तपः**, **आर्जवम्** (सरलता) का प्रयोजन विशेष रूप से ब्रह्मचर्य से है। ब्रह्मचारियों के लिए स्त्रियों से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध रखने का निषेध है। उन्हें ब्रह्मचारी-व्रत का पालन करते हुए चित्त से वैदिक शास्त्रों के अध्ययन और ज्ञान-प्राप्ति में संलग्न रहना चाहिये। इसी को **स्वाध्यायः** कहा जाता है। **तपः** विशेष रूप से वानप्रस्थों के लिए है। कोई भी मनुष्य आजीवन गृहस्थ न रहे। स्मरण रहे कि जीवन के ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास—ये चार आश्रम हैं। अतएव गृहस्थ के बाद वानप्रस्थ ले लेना चाहिए। वैदिक-विधान है कि सौ वर्ष के जीवन में पच्चीस वर्ष ब्रह्मचारी रहे, पच्चीस वर्ष गृहस्थ में और पच्चीस-पच्चीस वर्ष वानप्रस्थ और संन्यास में रहे। गृहस्थ से निवृत्त मनुष्य को मन, वाणी और शरीर के तप का अभ्यास करना चाहिए। वस्तुतः सम्पूर्ण वर्णाश्रम धर्मव्यवस्था तपस्या पर ही आधारित है। तपस्या के बिना किसी की मुक्ति नहीं होती। यह कहना वैदिक शास्त्रों और भगवद्गीता के बिल्कुल विपरीत है कि जीवन में तप की कोई आवश्यकता नहीं है, मनोधर्मी करने से सब कुछ अपने आप हो जायगा। ऐसे मतों का निर्माण वे कपटी अध्यात्मवादी किया करते हैं, जो केवल अपने अनुगामियों की संख्या बढ़ाने के लिए चेष्टा कर रहे हैं। लोगों को विधि-निषेध प्रिय नहीं होता। अतएव उन्हें आकृष्ट करने के लिए ये धूर्त न तो शिष्यों को संयम की कोई शिक्षा देते हैं और न उनके अपने जीवन में ही संयम का कोई स्थान होता है। परन्तु यह विधि वेद-विरुद्ध है।

आर्जवम् सरलता का अभ्यास सभी वर्ण-आश्रमों के मनुष्यों को करना चाहिए। जीवन बड़ा ही सात्त्विक और सरल हो।

जीव की उत्तरोत्तर उन्नति को न रोकने का नाम **अहिंसा** है। यह नहीं समझना चाहिए कि देह का नाश होने पर भी आत्मा का कभी नाश नहीं होता, इसलिए इन्द्रियतृप्ति के लिए जीव-हिंसा करने में कोई हानि नहीं है। अन्न, फल, दुग्ध आदि पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं; परन्तु फिर भी लोगों को पशु-हिंसा का व्यसन सा हो गया है। पशु-हिंसा करने का मनुष्य के लिए कोई कारण नहीं है; मनुष्यमात्र के लिए इसका